अध्याय दसवाँ

॥श्री गणेशाय नमः॥ श्री सरस्वत्यै नमः॥ श्री सिद्धारूढाय नमः॥

"इस विश्व में निवास करने वाले सभी प्राणियों को आप निष्पक्षता से एकसमान समझने के कारण अनेक लोगों को आप एक ही दिखाई पड़ते हैं। उस एक रूप में आप शाश्वत तथा निश्चल होते हैं। ऐसा यह सच्चिदानंद जहाँ पर पूर्ण रूप से पाया जाता है, वहीं सिद्धगुरु महाराज है। आपकी कृपा से सभी भक्तों को आप के चरणकमलों में सुखप्राप्ति हो जाए।"

श्रीसिद्धारूढ़जी हे साक्षात ईश्वर के समान सभी प्राणियों पर दया करते थे। भक्त हो या उन्मत्त, सभी को पार लगाने के लिए वे हमेशा तत्पर रहते थे। जैसे ज्ञानबोध का सागर या भवनदी को पार करानेवाली नाव हो, ऐसे यह जगत जो प्रथम गुरु है, वहीं ये सतगुरु सिद्धनाथ हैं। उनकी जीवनी श्रवण करने से सभी दोषों का निवारण होता है और अनन्य भाव से उनका नाम जपने से संसार (गृहस्थी) की चिंताएँ खत्म होती हैं। पिछले अध्याय में श्रोतागणों ने सिद्धगुरुवर्य मंगलगिरीपर जाने का वर्णन सुना है। मंगलगिरी पहाड़ से नीचे उतरते समय एक गुफा में सिद्धजी ने सोमेश्वर नाम के एक ब्राह्मण को देखा। वह ब्राह्मण "कुक्कुटनाथ कल्प (यानी श्मशान में मुर्गे की बली चढाकर क्षुद्र देवताओं को प्रसन्न करके उनसे मनचाही वस्तु देनेवाली दैवी शक्ति), पर्वतकल्प, मूलिकारसवाद (औषधि तथा मंत्रोपचारोंसे दूसरों को वश में करने की शक्ति)" तथा पापमय ऐसी वशीकरण विद्या जैसे क्षुद्र शास्त्रों की पढ़ाई करता था। उसके कर्म देखकर सिद्धारूढ़जी के मन में दया उत्पन्न हुयी और उन्होंने उसे पूछा, "भैया, ये तुम कैसा कर्म कर रहे हो? अरे, ब्राह्मण जाति में जन्म पाने के पश्चात ऐसे कर्म करना अनुचित है यह जानकर, ऐसे क्षुद्र शास्त्रों की पढाई करके तुम स्वधर्म से वंचित होकर भ्रष्ट हो रहे हो। आँगन में स्थित कल्पवृक्ष को तोड़कर उस जगह पर बबूल का पेड लगाने से तुम सर्वथा जननिंदा को प्राप्त हो जाओगे। ऐसा लिखा गया है की जिस के पास पूर्वजन्म का कुछ पुण्य है, अगर वह ऐसे शास्त्रों का अभ्यास करता है तो उसे दैवी शक्ति प्राप्त होगी; ये कहने का प्रयोजन यह है की मनुष्य पुण्य संपादन करें। पुण्यदायक आचरण करने से महान दैवी शक्तियाँ प्राप्त होती हैं, यह जाने बिना, ऐसे कर्मों का

आचरण करना केवल पापों में वृद्धि करना ही होगा। जो वेदों में बताए प्रकार शास्त्रोक्त कर्मों का आचरण करते हैं, वे मृत्यु के पश्चात पुण्यलोक जाते हैं और पुण्य खर्च होने के पश्चात फिर इस मृत्युलोक में जन्म लेते हैं। उन्हें इस जन्म-मृत्यु के फेरे से छुटकारा नहीं मिलता। ऐसे पुण्यकर्म करने के पश्चात भी, जब शरीर से संलग्न होने वाले दुख (रोग आदि) तथा जन्म और मृत्यु से छुटकारा नहीं मिलता है, ऐसा होते हुए ये ऐसे क्षुद्र और दुखदायक कर्मों का आचरण करके, कैसे सुख प्राप्त होगा? ऐसे कर्मों के आचरण से तुम निश्चित रूप से नरकवास के भागी हो जाओगे।" सिद्धगुरुजी की ये बातें सुनकर, सोचकर ब्राह्मण ने कहा, "हे महात्मा, मैं सचमुच मूर्ख होकर इन शास्त्रों के आचरण से इस प्रकार की दुखदायक स्थिति निर्माण होती है, यह नहीं जानता था, साथ ही, जिसने मुझे ये शास्त्र सिखाएँ, उसने इन सभी घोर परिणामों से मुझे बिलकुल अवगत नहीं कराया था।" सिद्धजी ने कहा, "गुरु की परीक्षा किए बिना ही तुम उसके शरणार्थी हुए, यह तुम्हारी ही गलती है।" उसपर उसने कहा, "गुरुनाथजी, अब इस दोष के परिहार के लिए मुझे किस प्रकार प्रायश्चित करना होगा?" सिद्धारूढ़जी ने कहा, "प्रतिदिन तुम गायत्री मंत्र का पठण करों। प्रतिदिन इस मंत्र का जाप चौबीस हजार बार करने से निश्चित ही तुम्हारा मन शुद्ध होकर तुम आत्मज्ञान प्राप्त करोगे।" यह सतगुरूजी के वचन सुनकर उस ब्राह्मण ने उन सभी किताबों का वहीं विसर्जन किया और सिद्धारूढ़जी को प्रणाम करके वह घर लौटा। वहाँ से सतगुरुजी अनेक गाँव, नगर देखते हुए, अनेक दुख तथा पीड़ाएँ सहते हुए आदवानी गाँव पहुँचे। पहाड़ पर स्थित बालेकोल नाम की जगहपर वे तीन महिनेतक रहे। वहाँ रहते हुए वे प्रतिदिन ब्रह्मज्ञान प्राप्ति की मनोकामना तथा उसके लिए प्रयत्न करने वाले मुमुक्षु जनों के शास्त्रों से संबंधित संदेह आनंदित होकर दूर करते थे। एक शिष्य ने सिद्धजी से पूछा, "हर कोई इस शरीर को ही 'मैं' ऐसा संबोधित करता है। अगर शरीर ये आत्मा नहीं है, तो बताईए, की आत्मा किसको कहते है?" सिद्धारूढ़जी ने कहा, "जो मूलतत्व अन्न से निर्माण होते हैं, ऐसे मूलतत्वों से यह शरीर पूर्ण रूप से बना है। इसीलिए यह शरीर अन्नमय है। (श्लोक) 'पंचात्मकं पंचसु वर्तमानं षडाश्रयं षड्गुणयोगयुक्तं॥ तं सप्तधातुं त्रिमलं त्रियोनिं चतुर्विधाहारमयं शरीरं॥' इस

प्रकार यह अन्नमय शरीर भिन्न तत्वों से बना हैं, यह जानने वाला जो चैतन्यात्मा ब्रह्म है, वह अशरीरी है यह हमेशा ध्यान में रखना| अगर तुम पूछोगे की ये किस प्रकार जाना जा सकता है, तो सुन। पृथ्वी, तेज (अग्नि), आकाश, वायु और आप (जल) इन पंचतत्वों से ही सभी व्यवहार चलते हैं यह जानकर परमात्मा ने हरएक तत्व के दो हिस्से किये। एक हिस्सा आश्रय के लिये रखा। बचे हुए दूसरे हिस्से से और चार हिस्से बनाए, और इन चारों में से एक एक हिस्सा अन्य चार तत्वों के आश्रय हिस्से में मिलाया। इसलिए पंचतत्वों के एक एक तत्व के आश्रय हिस्से में अन्य चार तत्वों में से हर एक का चौथाई, इस हिसाब से चार हिस्से जुड़ जाने से कुल मिलाकर पाँच हिस्से होते हैं। इसी प्रकार अन्य तत्वों के भी पाँच हिस्से होते हैं। इस प्रकार ये सब मिलाकर पच्चीस तत्व हुए। ये सभी तत्व मिलकर इस शरीर का निर्माण हुआ। परंतु शरीर में कोई चलफिर ने क्षमता नहीं थी। उसपर परमात्मा ने कहा ये तो एक जड़ शरीर है, मेरे बिना चलफिर ही नहीं सकता। इसलिए उसने उस शरीर का माथा छेदकर, उस सूक्ष्म छिद्र से प्रवेश करके, शरीर का अभिमान स्वीकार कर, पंचतत्वों से बने शरीर के भोगों का उपभोग लेकर संस्कारयुक्त हुआ। उसपर सपनों में छोटे छोटे भोग रचकर, लिंगदेह (सूक्ष्मशरीर) से उनका उपभोग लेकर, सपने समाप्त होते ही गहरी नींद में रहकर वह आनंदमय होता है। इस प्रकार जागृति, निद्रा तथा सपना इन तीनों अवस्थाओं में वह साक्षी होकर सब देखता है। अब ये बताओ, की आत्मा और स्थूल शरीर का आपस में क्या संबंध है?" तब शिष्य ने सतगुरुजी से पूछा, "महाराज, तो फिर स्थूल शरीर का संबंध किस से होता है?" सतगुरुजी ने कहा, "सुन, शरीर में स्थित कठिन अंश पृथ्वी है, उसी प्रकार द्रव अंश जल है, शरीर की गरमी यानी अग्नि का अंश है, शरीर का घूमफिरना यह वायु के अंश से होता है तथा शरीर की पोल आकाश का अंश होता है। इस प्रकार इस शरीर का पंचतत्वों से संबंध है। शरीर का विनाश होता है, लेकिन उसके अंदर बसे हुए आत्मा का भी विनाश होता है ऐसा कहोगे तो घोर अनर्थ होगा।" तब हाथ जोड़कर वह शिष्य बोला, "हे सतगुरुजी, शरीर के पच्चीस तत्वों से मेरी आत्मा पूर्ण रूप से किस प्रकार भिन्न है, यह आप की

कृपा से जानकर धन्य हो गया।" उसपर उसने आँसुओं से भरे नयनों से सतगुरुजी को प्रणाम किया और उनका आशिर्वाद पाकर वहाँ से चला गया।

वहीं पर एक कोढ़ी था। उसने सतगुरुजी से प्रार्थना की, "महाराज, आप ने उस के मन के रोग का निवारण किया, उसी प्रकार, कृपा करके मेरे कुष्ठ का भी सत्वर निवारण कीजिए।" ऐसा कहते हुए उसने उन्हें साष्टांग प्रणाम किया। सतगुरुजी ने उसे रीतिनुसार पंचाक्षरी मंत्र का उपदेश किया और उसे स्वयं के चरणामृत से स्नान कराया, तब जो अचरज हुआ, वह सुनिए। एक क्षण में उस का कुष्ठ नष्ट होकर उसे दिव्य शरीर की प्राप्ति हुयी। यह चमत्कारी लीला देखकर लोग वहाँ दौड़ते हुए चले आए। असंख्य लोगों को वहाँ इकट्ठा होते देखकर सिद्धनाथजी वहाँ से चले गये, जैसे प्रारब्धकर्म की तेज हवा के झोंके से मानो उनका शरीर रूपी पत्ता उडकर अन्य जगह चला गया हो। अनेक गाँव तथा नगर घूमकर वे विजापुर पहुँचे, वहाँ उन्होंने अनेक लीलाएँ दिखाते रहे।

वहाँ बांगी नाम के सज्जन के घर के सामने सिद्धनाथजी खड़े थे। तब उस घर से एक सदस्य बाहर आया और उन्हें देखकर मन में सोचने लगा की उस के घर का काम करने के लिए सामने खड़ा मनुष्य योग्य है। ऐसा विचार करते हुए उसने सिद्धनाथजी को एक भाकरी (जुआर की रोटी, उत्तर कर्नाटक में अक्सर भोजन में जुआर की रोटी का उपयोग किया जाता है, जिसे भाकरी कहते है।) दी। उसपर उसने सिद्धारूढ़जी से कहा, "यह गोबर का ढेर देख लो, यह ढेर उठाकर ले जा और तत्काल कूडाखाने में डाल।" सिद्धनाथजी तुरंत काम करने लग गये। कुछ समय बाद वह मनुष्य अंदर गया तब सिद्धनाथ भी वहाँ से निकले और भिक्षा के लिए दूसरे सज्जन के घर गये। उस सज्जन ने सिद्धजी को देखते ही सोचा की घर के सामने पड़ा कीचड साफ करने के लिए योग्य मनुष्य मिला है, इसलिए उस काम के लिये इसको अभीं नियुक्त करना अच्छा रहेगा। ऐसा सोचते हुए उसने सिद्धनाथजी से पूछा, "भाकरी चाहिए?" सिद्धजी ने सिर हिलाकर सकारात्मकता दिखाई। घर जाकर आधी भाकरी ले आकर सिद्धजी के हाथपर रखते हुए उसने कहा, "यह कीचड तुरंत घर के सामने से उठाकर बाहर फेंक दे।" सिद्धजी ने तुरंत काम करना आरंभ किया लेकिन उस सज्जन के घर में प्रवेश करते ही उस काम को जल्द ही पूर्ण करके वे वहाँ से आगे निकले।

वहाँ से वे जब तासबावडी नाम के गाँव जाकर वहाँ विश्राम कर रहे थे, इतने में रात होते ही एक मनुष्य आकर उन्हे पूछने लगा, "बाबा, क्या आपने भोजन किया है या नहीं?" सिद्धनाथजी ने इशारे से ही 'नहीं' कहते ही वह उन्हें अपने घर ले गया। वहाँ उन्हें बासी अन्न खिलाने के पश्चात उसने कहा, "चलिए अब जुम्मा मस्जिद की ओर, वहाँ एक नौटंकी होगी, चलकर हम उसे देख लेंगे।" कहते हुए वह सिद्धजी को वहाँ ले गया। उसपर उस मंदबुद्धि ने उनके हाथ में एक मशाल थमाकर, उसे पकड़े रखने के लिए कहा। सिद्धारूढ़जी ने स्वीकृति दी। सिद्धनाथजी ने मन में कहा मैं ही इस जगत में सर्वश्रेष्ठ हूँ और मेरे ही प्रकाश से इस जगत का सारा खेल खेला जा रहा है। कुछ समय के पश्चात नींद के प्रभाव के कारण उनके हाथ से मशाल गिर पडी, उसे देखते ही वह मनुष्य भागकर वहाँ आया और सिद्धनाथजी के माथेपर जोर से मारा। गिरे हुए सिद्धजी को उसने हाथ पकडकर खड़ा किया तब वहाँ के लोगों ने कहा की वे जानते थे की सिद्धजी एक पागल है। उस समय सिद्धजी ने मन में कहा की अच्छा हुआ जगत में चलने वाली नौटंकी पर प्रकाश फैलाने के लिए इन्होंने मुझे अंधेरे से जगाया, जिससे मेरे अंदर जागृति हो जाए। मेरे माथे की पूजा करके जैसे इन्होंने मुझे पारितोषिक ही दिया है, ऐसा सोचकर वे आनंदित होकर डोलने लगे।

खेल समाप्त होत ही लोग अपने घर लौट गये, तब वह जगह खाली हुई देखकर सिद्धारूढ़जी जमीन पर सो गये। इस प्रकार सिद्धराज कई दिन बहुत कष्ट सहते रहे, क्योंकि उन्हें किसी भी घर से भिक्षा नहीं मिलती थी। उस समय उन्होंने बस्ती छोड़कर मस्जिद के पीछे जाकर रहना शुरु किया। वहाँ वे सीताफल तथा अन्य कुछ फल खाकर जमीन पर सोते थे। जब वस्त्र तथा भोजन की चिंता नहीं रहती तब परिपूर्ण वैराग्यस्थिति प्राप्त होती है। जिससे मन की आत्मा के साथ एकाग्रता बढ़कर मन को शांति प्राप्त होती है। उन्हें देखकर त्रिगुणों (मनुष्य हमेशा सत्व, राजस तथा तमस इन तीन गुणों के प्रभाव में रहता है।) के चंगुल में फँसे और जिस गुण के प्रभाव में मनुष्य होता है उस गुणानुसार तथा जातिकुल पर विश्वास रखने के कारण भ्रमित हुए लोग उन्हें देखकर कहते थे की शायद वे पागल हैं। सात्विक गुणों वाली महिलाएँ कहती थी की लगता है

बेचारे का नसीब कठोर है, जो बिना अन्नजल उसे खेतों तथा जंगलों में घुमा रही है। सचमुच कर्म की गति गहन है, हम उसे कैसे समझ सकते हैं? उन महिलाओं की बातों में से केवल 'प्रारब्ध' यह शब्द सहनशील सिद्धारूढ़जी ने सुनते ही उन्हें इसके पूर्व घटी हुई एक घटना याद आयी।

श्रीशैल की पूर्व दिशा में स्थित बव्देली नाम के एक गाँव के मंदिर में सिद्ध बैठे हुए थे तब एक सिपाही ने आकर उन्हें पूछा, "तुम पक्का कौन हो यह बताओ।" तब ध्यानधारणा में लीन होने के कारण सिद्धारूढ़जी ने संभाषण न करते हुए केवल मौन धारण किया हुआ देखकर सिपाही और भी क्रोधित हो गया। फिर से वही प्रश्न बार बार पूछने के बावजूद भी जब सिद्धनाथजी ने उत्तर न दिया हुआ देखकर अत्यंत गुस्से से उसने उन्हें लात मारी। उसपर उस महात्मा का हाथ पकडकर उन्हें घसीटते हुए वह कोतवाल के पास ले गया और उसकी संमति से उन्हें कालकोठरी में बंद किया। उसके पश्चात कोतवाल किसी काम से दूसरे गाँव फँसे रहने के कारण तीन दिन सिद्धारूढ़ स्वामीजी कैद में रहे। कोतवाल के वापसी के पश्चात सिपाही ने याद दिलाते ही उसकी आज्ञा से सिद्धारूढ़जी को कैद से बाहर निकाला गया। कोतवाल ने सिद्धारूढ़जी से पूछा, "तुम कौन हो? किस गाँव से आये हो?" सिद्धजी ने उसे उत्तर न देने के कारण उसने वहीं प्रश्न उनके समीप आकर पूछा, फिर भी सिद्धजी ने उसे उत्तर नहीं दिया। तब गुस्से से आग बबूला होकर उसने कहा, "बहुत मस्ती है इसके शरीर में! जमकर इसकी पिटाई करो, तब अपनेआप ही उस से उत्तर मिलेगा।" उसपर दो सिपाहियों ने मिलकर उन्हें पिटना शुरु किया। उनके हर एक प्रहार के साथ सिद्धारूढ़जी 'शिवार्पणमस्तु' का उच्चारण कर रहे थे। इस प्रकार ग्यारह प्रहारों के होते ही एक ब्राह्मण वहाँ आया। सिद्धनाथजी का शांत चेहरा देखकर उसने कहा, "छोडिए उस महापुरुष को! उसे मैं मेरे घर ले जाता हूँ।" उसने सिद्धनाथजी को छुडाया और अपने घर ले जाकर प्रेम से प्रथम उन्हें अभ्यंग के साथ स्नान कराया और उत्तम भोजन देकर पंद्रह दिन तक अपने घर में रखा। गाँव के लोग उसके घर आकर सिद्धजी का आदरपूर्वक दर्शन करके उनसे वेदांत के विषय पर प्रवचन सुनकर संतुष्ट होते थे। विजापुर के जंगल में होते हुए महिलाओं के मुँह से 'प्रारब्ध' शब्द सुनते ही सिद्धजी को पिछली ये सभीं बातें याद आयी। उसपर

उन्होंने मन में कहा की मेरी यह स्थिति तो उस स्थिति की अपेक्षा निश्चित ही उत्तम है। उसके पश्चात सिद्धनाथजी कुछ समय के लिए निर्विकल्प समाधि में लीन रहे। हे भाविक श्रोतागण, आगे की कथा सुनने के लिए तैयार हो जाईए। सतगुरुनाथजी का जीवन चरित्र गहन है, जिस के सुनने से सभी दोषों का परिहार होकर मन परमोच्च स्थिति में पहुँचकर ज्ञानप्राप्ति होती है। अस्तु। जिसका श्रवण करने से सभी पाप भस्म हो जाते हैं, ऐसे इस श्री सिद्धारूढ़ कथामृत का मधुर सा यह दसवाँ अध्याय श्री शिवदास श्री सिद्धारूढ़ स्वामीजी के चरणोंमें अर्पण करते हैं। सबका कल्याण हो।

॥ श्री गुरुसिद्धारूढ़चरणारविंदार्पणमस्तु ॥